ORIGINAL RESEARCH PAPER

History

KEY WORDS: रहस्यवादी, मानवतावादी, युग–प्रवर्तक, मध्ययुगीन, प्रासंगिक, साम्प्रदायिकता

वर्तमान संदर्भ में कबीर के विचारों की प्रासंगिकता : एक अध्ययन

डॉ राखी पूनिया

ABSTRACT

कबीर दास 15वीं शताब्दी के एक महान् रहस्यवादी कवि व संत थे। कबीर एक उपदेशक, समाज–सुधारक, मानवतावादी तथा युग–प्रवर्तक कवि रहे थे, इसलिए उन्हें जागरण युग का अग्रदूत भी कहा जाता है। मध्ययुगीन संत कवियों में कबीर का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। उनके विचार वर्तमान युग में भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने कभी व अपने युग में रहे थे। उन्होंने किसी भी देश, क्षेत्र, जाति व धर्म से ऊपर उठकर केवल मानवता को केन्द्र में रखकर अपने विचार रखे हैं। कबीरदास ने समाज में व्याप्त उन तमाम परम्पराओं, रूढियों व मान्यताओं को तोड़ने का भस्कर प्रयास किया है जो मनुष्य–मनुष्य में भेदभाव उत्पन्न करती है। उन्होंने लोगों को वास्तविक अर्थों में इंसानियत का पाठ पढ़ाया है। कबीर ने सामाजिक समन्वय पर बल दिया है। उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की है जो कुरीतियों, रूढियों, कर्मकांडों, आडम्बरों, अंधविश्वासों व साम्प्रदायिकता से मुक्त हो जो धर्म, वर्ण, जाति निरपेक्ष हो। एक ऐसा समाज जो इंसान को इंसान के रूप में देखे ना कि उसकी जाति, वर्ण, धर्म, भाषा व क्षेत्र के आधार पर आंकलन करे।

भूमिका

महान् संत और समाज सुधारक कबीरदास ने भक्ति आंदोलन पर अत्यंत गहरा प्रभाव डाला था। कबीर शब्द अरबी भाषा से निकला है। अरबी में कबीर का अर्थ होता है महान्। उनके व्यक्तित्व व विचारों पर हिन्दू व सूफी विचारों का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। कबीर के जन्म के संबंध में अनेक किंवदन्तियाँ है। एक प्रचलित जनश्रुति के अनुसार कबीर का जन्म काशी के लहरतारा नाम के स्थान पर हुआ था। वे रामानन्द स्वामी के आर्शीवाद से काशी की एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से पैदा हुए थे। समाज में अपयश के डर से वह विधवा ब्राह्मणी उस नवजात शिशु को लहरतारा ताल के निकट फेंक आयी थी। फिर इसके उपरान्त नीरू नामक एक जुलाहा उसे अपने घर ले आया। अतः कबीर का पालन–पोषण एक गरीब मुस्लिम जुलाहे परिवार में हुआ। कबीर के पिता का नाम नीरू व माता का नाम नीमा था।

कबीर की जन्म व मरण तिथि को लेकर भी विवाद है। इस सम्बन्ध में विद्वानों ने भिन्न–भिन्न मत प्रकट किए हैं –

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कबीर का जन्म संवत् 1456 मानते हैं।
2. डॉ0 बाबू श्यामसुंदरदास के अनुसार कबीर का जन्म संवत् 1456 व मृत्यु संवत् 1575 में हुई थी।
3. डॉ0 पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल के अनुसार कबीर का जन्म संवत् 1427 व मृत्यु संवत् 1505 में हुई थी।
4. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार कबीर का जन्म संवत् 1456 में हुआ था।

कबीर के जन्मस्थान के संबंध में तीन मत प्रचलित हैं :

1. जन्म भूमि मगहर थी।
2. काशी में जन्मे
3. आजमगढ़ में बेलहरा गॉव में जन्मे थे।

कुछ विद्वानों के मतानुसार वे जन्म से मुसलमान थे और युवावस्था में स्वामी रामानंद के माध्यम से उन्हें हिन्दू धर्म की बातों का ज्ञान हुआ। कबीर के पूरे जीवनकाल को लेकर ही विद्वानों में मतभेद देखने को मिलता है। कबीर की पत्नी को लेकर भी विवाद है। परन्तु कबीरपंथियों के मतानुसार कबीर अविवाहित थे तथा निःसंतान भी। वहीं डॉ0 राजकुमार वर्मा के मतानुसार कबीर की दो पत्नियाँ थी – एक का नाम लाई था और दूसरी का नाम रामजनिया या धनिया था। यह भी कहा जाता है कि कबीर को कमाल नाम का एक पुत्र व कमाली नाम की एक पुत्री भी थी। एक जनश्रुति के अनुसार कबीर की मृत्यु के उपरान्त उनके शव को लेकर हिन्दू–मुसलमानों में विवाद उत्पन्न हो गया था। हिन्दू चाहते थे कि उनका अंतिम संस्कार हिन्दू रीति से हो और मुसलमान चाहते थे कि मुस्लिम रीति से। विवाद के चलते जब उनके शव से चादर हट गई तो लोगों ने वहां शव के स्थान पर फूलों का ढेर देखा। बाद में फूल बांट दिए गए और दोनों ही धर्मों के शिष्यों ने अपनी–अपनी रीति से उनका अंतिम संस्कार किया।

धार्मिक विचार : सांप्रदायिक वैमनस्य व बाह्याडम्बरों का विरोध

वर्तमान समय में समाज की प्रमुख समस्याओं में से एक बड़ी समस्या धार्मिक कट्टरता है। इस साम्प्रदायिकता व धार्मिक कट्टरता ने आज मानव समाज को खंडित किया है उसे खोखला बना दिया है। जहॉ देखो वहॉ धर्म के नाम पर आतंकवाद फैला हुआ है। पूरा विश्व आज इस समस्या से जूझ रहा है। ऐसे समय में कबीर के विचार अत्यंत प्रासंगिक हो जाते हैं। उनके सांप्रदायिक सद्भाव के विचारों को जीवन में उतार कर इस समस्या से निजात पाया जा सकता है।

समाज–सुधारक कबीरदास ने विश्व–धर्म की रूपरेखा प्रस्तुत की है। उनका धर्म मानवता पर आधारित है। कबीर ने अपने विचारों के माध्यम से धार्मिक एकता तथा साम्प्रदायिक सद्भावना की स्थापना का प्रयास किया है। और धार्मिक आधार पर संघर्ष को निरर्थक ठहराया है। उन्होंने अपने विचारों के माध्यम से साम्प्रदायिक वैमनस्य, बाह्याडम्बरों, रूढियों, अंधविश्वासों व सामाजिक कुरीतियों का खण्डन किया है –

का नांगे का बाँधें चाँम।
जौ नहिं चीन्हसि आतमरांम।।
नांगे फिरें जोग जौ होई, बन का मिरिग मुकुति गया कोई।
मूंड मुडाएँ जौ सिधि होई, सरगहि भेंड न पहुँची कोई।।
बिन्दु राखि जौ तरिऐ भाई, तौ खुसरै क्यू न परम गति पाई।
कहै कबीर सुनौं रे भाई, रांम नांम बिनु किन सिधि पाई।।

कबीर कहते हैं कि यदि आत्मतत्व को नहीं पहचाना तो नग्न रहने का कोई लाभ नहीं। यदि नंगे फिरने से मोक्ष प्राप्त होता तो जंगल का कोई भी पशु मोक्ष प्राप्त कर लेता। यदि सिर मुंडाने से सिद्धि प्राप्त होती तो भेंड, जिसके पूरे शरीर के बाल मुंड जाते हैं, वह सीधे स्वर्ग को जाती। और यदि वीर्य–रक्षा से ही मोक्ष प्राप्त होता तो घोड़ा तथा बैल, जिनका बधिया किया गया है, वे मोक्ष क्यों नहीं पा लेते। अर्थात् बाह्याडम्बर निरर्थक है।

हिन्दू कहत है राम हमारा मुसलमान रहमाना।
आपस मैं दोऊ लड़े मरतु हैं मरम कोई नहिं जाना।।

हिन्दू को राम प्यारा है। मुस्लिम को रहमान। अर्थात् हिन्दू व मुस्लिम अपने–अपने इष्ट को श्रेष्ठ मानकर लड़ते रहते हैं। वास्तविक अर्थ को कोई नहीं जान पाता। इस दोहे के माध्यम से यह समझाने की कोशिश की गई है कि परम ब्रह्म एक ही है बस उसके नाम अलग–अलग हैं। और इस आधार पर संघर्ष करना व्यर्थ है।

कांकर पाथर जोरि के, मस्जिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।

कंकड़ व पत्थर जोड़कर मस्जिद बना ली और इस मस्जिद में मुल्ला जोर–जोर से अजान देता है। कबीरदास कहते हैं कि क्या खुदा बहरा हो गया है।

पाथर पूजे हरि मिलै, तो मैं पूजूँ पहार।
ताते तौ चाकी भली पीस खाय संसार।।

कबीरदास जी कहते हैं कि यदि पत्थर की मूर्ति पूजने से भगवान् मिल जाते हैं तो मैं पहाड़ पूज लेता हूँ। उसकी जगह कोई घर की चक्की की पूजा नहीं करता, जिससे अन्न पीस कर लोग अपना पेट भरते हैं।

केसीन कहा बिगड़िया जो मूड़े सौ बार।
मन को काहि न मूड़िये जामे विषय–विकार।।

केशों को बार–बार मुंडने से कोई लाभ नहीं है, अपने मन को मूडो। उसे साफ कर लो जिसमें विषयों के विकार–ही–विकार भरे पड़े हैं। अर्थात् आडम्बर व पाखंड छोड दो।

हम तो एक–एक कर जाना।
दोय कहैं तिनको है दो जग, जिन नाहीं पहिचाना।।
एकै पवन एक ही पानी एक ज्योति संसारा।
एक ही खाक घड़े सब भांड़े, एक ही सिरजन हारा।।

कबीरदास जी कहते हैं इस सम्पूर्ण जगत में एक ही पवन चलती है, एक ही जल है तथा एक ही ज्योति प्रकाशित होती है। एक ही मिट्टी से ईश्वर ने सभी जीवों की रचना की है। जैसे कि कुम्हार एक मिट्टी से भिन्न–भिन्न प्रकार के बर्तनों को आकार देता है।

अर्थात् मुस्लिम व हिन्दू भले ही विभिन्न नामों से अपने ईश्वर को पुकारते हो लेकिन ईश्वर में किसी भी प्रकार की कोई विभिन्नता नहीं है। भले ही सम्प्रदाय अनेक हैं परन्तु सबका ईश्वर एक ही है।

लाडू लावन लापसी पूजा चढ़े अपार।
पूजी पूजारी ले गया, मूरत के मुह छार।।

जो भगवान् के नाम पर मंदिरों में चढ़ावे के रूप में वस्तुएँ चढ़ाई जाती हैं। वह सारी वस्तुएँ पुजारी ले जाता है और भगवान को कुछ नहीं मिलता। इसीलिए कबीरदास जी ने इस प्रकार के आडम्बर व पाखण्ड का खण्डन किया है।

भारतीय वर्ण व्यवस्था का विरोध

वर्ण व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जिसने सम्पूर्ण मानव समाज को जाति के आधार पर विभाजित किया है। वर्तमान समय में छुआ–छूत में कमी अवश्य आई है परन्तु जातिवाद आज भी समाज में एक कोढ़ की तरह व्याप्त है। कबीर ने अपने काव्य में जातिगत भेदभाव को अमान्य किया है। जाति प्रथा को तोड़ने के लिए उन्होंने अभूतपूर्व प्रयत्न किया। उनका मानना था कि व्यक्ति अपनी ऊंची जाति से नहीं अपितु अपने गुणों व कर्मों से श्रेष्ठ बनता है –

जौ पै करता बरन बिचारै।
तौ जनतैं तीनि डांडि किन सारै।।
जे तूं बाभन बभनीं जाया, तौ आन बाट होइ काहे न आया।
जे तू तुरूक तुरूकिनी जाया, तौ भीतरि खतनां क्यूं न कराया।
कहै कबीर मद्धिम नहिं कोई, सो मद्धिम जा मुखि राम न होई।।

कबीरदास जी कहते हैं कि यदि सृष्टा के मन में वर्ण व्यवस्था होती तो वह व्यक्ति को जन्म देते ही उसके मस्तक पर तीन चिह्नों का तिलक लगा देता। परन्तु ऐसा नहीं है यह वर्ण–व्यवस्था नैसर्गिक नहीं अपितु मानव–कृत है। यदि ब्राह्मण जन्म से ही श्रेष्ठ है तो वह अन्य जातियों से भिन्न किसी अन्य मार्ग से क्यों नहीं उत्पन्न हुआ। यदि तुर्क तुर्किनी से जन्म लेने भर से खुद को विशेष वर्ग का समझता है तो गर्भ में ही उसका खतना क्यों न हो गया। अर्थात् कबीर के कहने का तात्पर्य यह है कि जन्म से ही कोई श्रेष्ठ या नीच नहीं होता।

पॉड़े बूझि पियहु तुम पानी।
जेहि मटिया के घर मॅह बैठे, तामे सृष्टि समानी।
छपन कोटि जादव जॅह भोजे, मुनि जन सहस अठासी।
पैग पैग पैगम्बर गाड़े, सो सब सरि भो माटि।
तेहि मटिया के भॉडे पाड़े, बूझि पियहु तुम पानी।
मच्छ कच्छ घरियार वियाने, रूधिर नीर जल भरिया।
नदिया नीर नरक बहि आवै, पसु मानुष सब सरिया।
हाड़ झरी झरि गूद गलीगल, दूध कहॉ ते आया।
सौ लै पांड़े जेंवन बैठे, मटियहि छूति लगाया।
बेद कितेब छाँडि देहू पांड़े, ई सब मन के भर्मा।
कहैं कबीर सुनो हो पांड़े, ई सब तुम्हरे कर्मा।।

कबीरदास जी कहते हैं कि हे पंड़ित तुम पहले जाति पूछते हो, फिर उसके हाथ का पानी पीते हो। तुम नीची जाति के मिट्टी के पात्र तथा जल को भी अशुद्ध समझते हो। तो अब तुम सोच समझकर पानी पिओ क्योंकि सभी जगह की मिट्टी और जल अशुद्ध ही है। तुम्हारा घर जिस मिट्टी का बना है, वह भी अपवित्र है, क्योंकि सारी सृष्टि उसी में विलीन है। छप्पन करोड़ यादव और अट्ठासी हजार ऋषि–मुनि यहॉ मर कर विलीन हो गए हैं तथा कदम–कदम पर गड़े हुए पैगम्बरों की लाशें सड़कर मिट्टी हो गई हैं। हे पंड़ित ये बर्तन उसी मिट्टी के हैं और तुम जाति पूछकर पानी पीते हो।

केवल मिट्टी ही नहीं अपितु जल भी अशुद्ध है। इस पानी में मछलियॉ, कछुए व घड़ियाल बच्चे देते हैं और उनका खून पानी में मिल जाता है। यही नहीं मृत पशु व इंसान भी इसमें सड़ते हैं।

जिस दूध को तुम पवित्र मानते हो, वह भी पशुओं की हड्डी व गूदे से गलकर बनता है। और ऐसे दूध को तुम शुद्ध समझ कर पीते हो तथा मिट्टी को अशुद्ध मानते हो।

जाति पाति पूछै नहिं कोई।
हरि को भजै सो हरि कौ होई।।

कबीरदास जी कहते हैं कि जाति पाति को कोई नहीं पूछता हम तो एक ही ईश्वर की सन्तान हैं। अर्थात् ईश्वर सबका एक है। वह भेद–भाव से परे है।

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिये ज्ञान।
मोल करो तरवार का, पड़ा रहन दो म्यान।।

कबीरदास जी कहते हैं कि साधु यानि गुणी लोगों की जाति नहीं पूछनी चाहिये उनके केवल गुण देखने चाहिए। जिस प्रकार तलवार का महत्व होता है क्योंकि उसमें धार होती है। म्यान को केवल एक बाह्य आवरण है।

ऊँचे कुल का जनमिया, करनी ऊँच न होय।
स्वर्ण कलश मदिरा भरा, साधू निन्दे सोय।।

कबीरदास जी कहते हैं ऊँचे कुल में जन्म लेने से कर्म ऊँचे नहीं हो जाते हैं। जैसे स्वर्ण के कलश में शराब भरी हो तो वह निन्दा की ही पात्र होती है। वह श्रेष्ठ नहीं बन जाती।

हिंसा का विरोध
कबीर ने हिंसा को अमानवीय कहा है और अत्यंत कठोर शब्दों में इसकी निन्दा की है –
शूला बे अहमक नादाना, तुम हरदम रामहिं ना जाना।
बरबस आनि कै गाय पछारिन, गला काटि जिव आपु लिआ।
जियत जीव मुर्दा करि डारा, तिसको कहत हलाल हुआ।।
जाहि मासु को पाक कहत हो, ताकी उतपति सुनु भाई।
रज बीरज सो मांस उपाने, मॉस नापक जो तुम खाई।।
अपन दोस कहत नहिं अहमक, कहत हमारे बड़न किया।
उसकी खून तुम्हारी गर्दन, जिन्ह तुमको उपदेस दिया।।
स्याही गई सपेदी आई, दिल सपेद अजहूं न हुआ।
रोजा बंग निमाज का कीजै, हुजरे भीतर पैठि मुआ।।
पंडित बेद पुरान पढ़तु है, मुल्ला पढ़ै कुराना।
कहैं कबीर दोउ गए नरक महँ, जिन्ह हरदम नामहि न जाना।।

कबीरदास जी कहते हैं कि हे अज्ञानी मनुष्य तू किस भ्रम में जी रहा है। तू जबर्दस्ती गाय को लाकर उसका गला काटकर प्राण ले लेता है। तू एक जीवधारी को मार कर कहता है कि यह विहित है। जिस मांस को तू खाता है उसे तू पवित्र मानता है। तुझे पता है इसकी उत्पत्ति कैसे हुई है। यह मांस रज–वीर्य से बनता है और कोई भी इसे पवित्र नहीं कह सकता। तू हत्या तो कर देता है परन्तु अपना दोष नहीं देख पाता। इसके विपरीत तू कहता है हलाल को हमारे महान् पुरूषों ने पवित्र माना है। अतः यह न्यायसंगत है। तुमने जिस जीव का वध किया है, उसका पाप तुम्हें लगेगा और जिसने तुम्हें ऐसा उपदेश दिया उसे भी। जवानी के बाद अब बुढ़ापा आ चुका है लेकिन तुम्हारा हृदय अभी भी अशुद्ध है। तुम जो व्रत रखते हो, बांग देते हो, नमाज पढ़ते हो यह सब व्यर्थ है। पंडित लोग वेद–पुराण पढ़ते हैं तथा मुल्ला कुरान। कबीर कहते हैं कि ऐसे पंडित व मुल्ला दोनों को नर्क में जगह मिलती है जिन्होंने ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को नहीं जाना। अर्थात इस पद में कबीर ने जीव वध करने वालों की निन्दा की है।

मुल्ला कहहू निआउ खुदाई
इहि बिधि जीव का भरम न जाई।।
सरजी आनैं देह बिनासै माटी बिसमिल कीआ।
जोति सरूपी हाथि न आया कहौ हलाल क्यूँ कीआ।।
बेद कतेब कहहु मत झूठे झूठा जौ न बिचारै।
सम घटि एक एक करि लेखै भै दूजा करि मारै।।
कुकड़ी मारै बकरी मारै हक्क हक्क करि बौलै।
सबै जीव सांई के प्यारे उबरू हुगे किस बौलै।।
दिल नापाक पाक नहिं चीन्हां तिसका मरम न जांनां।
कहै कबीर भिसति छिटकाई दो जग ही मन मांनां।।

कबीरदास धर्म के नाम पर की जाने वाली हिंसा का विरोध करते हुए कहते हैं कि हे मुल्ला तुम ही ईश्वरीय न्याय कर दो। तुम ईश्वर द्वारा निर्मित जीव का वध करते हो। धर्म के नाम पर जो तुमने यह बलिदान दिया है उससे तुम्हें क्या लाभ हुआ। हिन्दू व मुस्लिम दोनों ही धर्मग्रन्थों की दुहाई देकर पशुबलि को धर्मसम्मत व न्यायसंगत सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन इन धर्मग्रन्थों के वास्तविक अर्थ को कोई नहीं समझता।

इनका अर्थ अपने स्वयं के भीतर विद्यमान पशुत्व का वध करना है। ना कि पशुओं व जीवों का वध करना। सभी जीवों में एक ही परमात्मा का वास है, फिर तुम उस जीव को दूसरा समझकर उसकी हत्या क्यों करते हो। तुम ईश्वर के नाम पर मुर्गी व बकरी का वध क्यों करते हो। कबीर कहते हैं कि तुम्हारे इस आचरण से तुम स्वर्ग के नहीं अपितु नरक के भागी बनते हो।

मानवीयता
कबीर मनुष्य–मनुष्य में जाति–पांति, धर्म इत्यादि के आधार पर भेदभाव को अस्वीकार करते हैं। उन्होंने किसी भी भेदभाव से ऊपर मानवीय धर्म को रखा है। वास्तविक अर्थ में उन्होंने मानवीयता को परिभाषित किया है –

ऐसा भेद बिगुचनि भारी।
बेद कतेब दीन अरू दुनियां, कौंन पुरिख कौन नारी।।
एक रूधिर एकै मल मूतर, एक चांम एक गूदा।
एक बूँद तैं सृष्टि रची है, कौन बाह्मन कौन सुदा।।
माटी का पिंड सहज उतपनां, नाद अरू बिंद समांनां।
बिनसि गया तैं का नांव धरिहौ, पढ़ि मुनि मरम न जांना।।
रज गुन ब्रह्मा तुम गुन संकर, सत गुन हरि है सोई।
कहै कबीर एक रामं जपहु रे, हिन्दू तुरूकन कोई।।

यहां कबीरदास जी कह रहे हैं कि ईश्वर ने सभी इंसान को समान रूप से बनाया है। इंसान ने ही ये भेद–भाव की दीवार खड़ी की है जो कि कृत्रिम है। वेद व कुरान, धर्म व सांसांरिकता के भेद भी मानव द्वारा निर्मित है। नर–नारी का भेद भी केवल शारीरिक है। सभी प्राणियों के शरीर में रक्त, मल–मूत्र, चर्म व मांस एक समान है। तो फिर ये ब्राह्मण व शूद्र का भेद कैसा। इस पार्थिव शरीर की उत्पत्ति जिस मूल नाद व बिन्दू से हुई है, यह उसी में समाविष्ट हो जाता है। जब शरीर नष्ट होता है तो सारा भेद भी समाप्त हो जाता है। मनुष्य ने केवल मानव में ही भेद नहीं किया अपितु ब्रह्मा को रजोगुण प्रधान, शिव को तमोगुण प्रधान तथा विष्णु को सत्वगुण प्रधान माना है। कबीर कहते हैं कि ना कोई हिन्दू न कोई मुस्लिम सभी में एक ही ईश्वर विद्यमान है।

प्रासंगिकता

कबीर ने विश्वधर्म की रूपरेखा प्रस्तुत की है। उन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों, रूढ़ियों, कर्मकांडों, आडम्बरों, अंधविश्वासों व साम्प्रदायिक वैमनस्य पर करारा व्यंग्य किया है। वह वास्तविक अर्थों में युग–प्रवर्तक कवि व जागरण युग के अग्रदूत थे। उन्होंने किसी भी देश, क्षेत्र, जाति व धर्म से ऊपर उठकर केवल मानवता को केन्द्र में रखकर अपने विचार रखे हैं। कबीर ने हिंसा को भी अमानवीय करार दिया है और अत्यंत कड़े शब्दों में उसकी निंदा की है। जाति प्रथा को तोड़ने के लिए भी उन्होंने अभूतपूर्व प्रयत्न किया। उनका मानना था कि व्यक्ति अपनी ऊँची जाति से नहीं अपितु अपने गुणों व कर्मों से श्रेष्ठ होता है। कबीर ने अपने विचारों के माध्यम से धार्मिक एकता तथा साम्प्रदायिक सद्भावना की स्थापना का प्रयास किया है। और धार्मिक आधार पर संघर्ष को निरार्थक ठहराया है। उन्होंने वास्तविक अर्थों में मानवीयता को परिभाषित किया है। अर्थात् उनके विचार वर्तमान युग में भी उतने ही प्रासंगिक है जितने कभी वे अपने युग में रहे थे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रदीप प्रताप, भक्तिकालीन काव्य परम्परा
2. डॉ0 ओमप्रकाश, मध्ययुगीन काव्य
3. डॉ0 जयदेव सिंह, सबद (भावार्थ बोधिनी व्याख्या सहित)
4. आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, कबीर–संग्रह
5. डॉ0 गोविन्द त्रिगुणयात, कबीर की विचारधारा
6. डॉ0 रमेशचन्द्र मिश्र, कबीर वाणी और विचार :2: पद–साखी–रमैनी
7. डॉ0 बलदेव वंशी, कबीर एक पुनर्मूल्यांकन
8. डॉ0 राजेन्द्र टोकी, कबीर दृष्टि–प्रतिदृष्टि
9. डॉ0 सोहन राज तातेड़, कबीर एवं आचार्य महाप्रज्ञ का समाज कल्याण दर्शन
10. अली सरदार जाफ़री, कबीर बानी
11. आचार्य हिजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य
12. डॉ0 श्यामसुन्दर दास, कबीर ग्रंथावली
13. परशुराम चतुर्वेदी, हिन्दी काव्य में निर्गण सम्प्रदाय
14. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास
15. डॉ0 रामकुमार वर्मा, संत कबीर